Dr. R.N. Sharma
J.M.S. College Munger

B.A. Part-III Philosophy (H) Paper-VI

Marriage (विवाह)

आज के व्याख्यान में विवाह का अर्थ, परिभाषा, उद्देश्य एवं विभिन्न प्रकारों पर विचार किया जायेगा।

किसी परिवार में पुरुष और स्त्री के यौन संबंध के लिए समाज द्वारा स्वीकृत एवं स्थापित व्यवस्था को ही विवाह कहते हैं। विवाह के बिना परिवार नहीं बन सकता है। विवाह और परिवार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। यह पुरुष के लिए जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक स्त्री के लिए भी है। क्योंकि वासना की तृप्ति आवश्यक है। तृप्ति नहीं होने से अनेक मानसिक बीमारियाँ होने की संभावना बनी रहती है। इसलिए यौन-तुष्टि बहुत ही स्वाभाविक और आवश्यक प्रक्रिया है। इसके लिए सर्वोत्तम व्यवस्था विवाह ही है। बलात्कार, व्यभिचार एवं अनैतिक यौन संबंध समाज दर्शन के दृष्टिकोण से निषिद्ध एवं अवैध है। गैरकानूनी, अवैध एवं समाजविरोधी यौन संबंध विवाह नहीं कहला सकता।

<u>परिभाषा</u> – विवाह के संबंध में अनेक विचारकों द्वारा अपने-अपने ढंग से परिभाषाएँ दी गयी हैं। यहाँ पर उनमें से कुछ परिभाषाओं पर विचार करना अपेक्षित है –

<u>लूसी मेयर</u> ने विवाह को परिभाषित करते हुए कहा है– "विवाह स्त्री-पुरुष का ऐसा योग है, जिससे स्त्री से जन्मा बच्चा माता-पिता की वैध संतान माना जाय।" इस परिभाषा में स्त्री-पुरुष से पैदा हुए सन्तानों को वैध घोषित किया गया है।

<u>डब्ल्यू० एच० आर० रिवर्स</u> के अनुसार – "जिन साधनों द्वारा मानव समाज यौन संबंधों का नियमन करता है, उन्हें विवाह की संज्ञा दी जा सकती है।"

<u>वेस्टमार्क के अनुसार</u> – "विवाह स्त्री एवं पुरुष के कम या अधिक रूप से सन्तानोत्पत्ति के कार्य के बाद भी चलने वाला स्थायी संबंध है।" यह परिभाषा केवल यौन संबंध की परिभाषा है, विवाह की नहीं। अतः यह अपूर्ण परिभाषा है।

<u>बिल्स एवं हाइजर</u> के अनुसार विवाह प्रत्येक मानव समाज की एक जटिल सामाजिक घटना है, जिसमें यौन संबंधों का शुद्ध जैवकीय कार्य होता है, परन्तु सामाजिक कार्य जैसे बच्चों की देखभाल, घर-गृहस्थी को सम्भालना एवं अन्य पारिवारिक, सांस्कृतिक कार्यों का महत्व और भी अधिक है।"

समनर एवं केलर के शब्दों में "सामाजिक संस्था के रूप में विवाह परिवार का ही भाग है एवं उसे परिवार से ही सम्मिलित किया जाता है, यद्यपि सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से इसे परिवार के पूर्व का विचार समझा जाता है। यह वास्तव में और भी अधिक गहन संस्था परिवार के अध्ययन के पूर्व तैयारी एवं प्रेरक है।"

राबर्ट एच० लुई के अनुसार "विवाह से तात्पर्य उन असंदिग्ध एवं स्वीकृत संबंधों से है जो यौन संतुष्टि के बाद भी विद्यमान रहते हैं और इस प्रकार पारिवारिक जीवन निर्माण करते हैं।"

मजूमदार एवं मदान के शब्दों में - "इनमें (विवाह में) कानूनी या धार्मिक आयोजन के रूप में उन सामाजिक स्वीकृतियों का समावेश होता है जो दो विभिन्न लिंगियों को यौन क्रिया और उनसे संबंधित सामाजिक, आर्थिक संबंधों में सम्मिलित होने का अधिकार प्रदान करती हैं।"

इस परिभाषा में पुरुष-स्त्री दो भिन्न लिंगों में यौन संबंध स्थापित करने की एक कानूनी, सामाजिक एवं आर्थिक स्वीकृति देने की बात कही गयी है। साथ ही साथ यह परिभाषा स्त्री-पुरुष दोनों को विभिन्न सामाजिक व आर्थिक क्रियाओं में सहभागी बनने का अधिकार भी प्रदान करता है। उपरोक्त सभी परिभाषाओं में यह परिभाषा ज्यादा उपयुक्त जान पड़ता है।

इस प्रकार उक्त सभी परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि विवाह वह साधन है जो विषम-लिंगियों को यौन-संबंध स्थापित करने की स्वीकृति प्रदान करने के साथ-साथ सापेक्ष रूप से स्थायी संबंधों में बांधना, संतानोत्पत्ति, बच्चों का लालन-पोषण एवं समाजीकरण की भावना पैदा करना है।

पुरुष और स्त्री के बीच विवाह यों ही नहीं होता बल्कि उसके पीछे कुछ प्रयोजन या उद्देश्य रहते हैं जो निम्नलिखित हैं -

विवाह का पहला उद्देश्य यौन संबंध की स्थापना है। यह जैविक होता है। समाज की निरन्तरता एवं उसकी संस्कृति के लिए यह आवश्यक है कि पुरुष एवं स्त्री के बीच इस प्रकार संबंधों में बंधना है, जिसमें उनको बच्चों की देख-भाल, शिक्षण एवं अन्य समाज के उत्तरदायित्व कार्यों को सौंपा जा सके। वे समाज के संस्कृति एवं मूल्यों को आत्मसात कर सकें। यौन तृप्ति का सबसे अच्छा साधन विवाह है। वेश्यालय में, बलात्कार में एवं चोरी-छिपे यौन संबंध बनाने से उतने अच्छे ढंग से यौन तृप्ति नहीं हो सकती, जितनी विवाह के द्वारा समुचित ढंग से यौन तृप्ति होती है। विवाह के द्वारा समाज में शांति और सुरक्षा आ जाती है।

विवाह का दूसरा उद्देश्य है, सन्तान उत्पत्ति एवं परिवार बसाना। यौनतृप्ति तो बिना विवाह के भी हो सकता है। परन्तु संतान और परिवार विवाह के बिना संभव नहीं हो सकता। जिस घर में बच्चे नहीं रहते, वह परिवार अपूर्ण रहता है। इसलिए हिन्दू धर्म में बंध्या औरत को अशुभ माना गया है। बिना पुत्र के मरने के बाद पिण्डदान देने वाला

को है नहीं रहता। इसलिए ऐसी मान्यता है कि वह मनुष्य नरक में जाता है। इसलिए संतान की उत्पत्ति सभ्यता एवं वंश के लिए आवश्यक है। कुछ लोग विवाह को एक संस्कार मानते हैं। इसमें दो आत्माओं का मिलन होता है। कुछ लोग इसे धार्मिक समझौता मानते हैं, जिसे तोड़ा भी जा सकता है या तलाक भी दिया जा सकता है। परन्तु वास्तव में स्त्री और पुरुष एक दूसरे के इतना निकट हो जाते हैं, इतनी आत्मीयता हो जाती है कि वे एक संस्कार में बंध जाते हैं।

विवाह का तीसरा उद्देश्य प्रेम और प्रेम की भावना पैदा करना है। सन्तान हो जाने पर यह प्रेम और भी मजबूत हो जाता है। वे जीवन साथी बन जाते हैं। एक दूसरे के सुख-दुःख में हाथ बटाते हैं। विवाह के बाद केवल शारीरिक संबंध ही नहीं रहता बल्कि मानसिक और भावनात्मक एकता भी आ जाती है।

विवाह का चौथा उद्देश्य आर्थिक सहयोग भी है। विवाह के साथ एक श्रम विभाजन भी हो जाता है। पुरुष बाहर के काम सम्पन्न करते हैं तो स्त्री घर के काम को सम्पन्न करती है। कुछ ऐसा भी देखा जाता है कि जिस काम को स्त्री ठीक से नहीं कर पाती, उसे पुरुष ठीक से करते हैं और जिसको पुरुष ठीक से नहीं करते, उस काम को स्त्री अच्छी तरह से कर पाने में सफल होती है। इस तरह आपसी संबंध कायम रखते हुए स्त्री, पुरुष घर एवं परिवार के सारे कार्यों का निर्वहन करने में सफल होते हैं। आश्रितों में आर्थिक हितों की रक्षा एवं भरण-पोषण के लिए भी विवाह आवश्यक है।

विवाह के प्रकार

प्राचीनकाल में हिन्दू शास्त्रकारों ने विवाह के विभिन्न प्रकार बताये हैं — वशिष्ठ ने छः तथा मनु ने आठ प्रकार बताये हैं। सामान्यतः मनु द्वारा बताये गये आठ प्रकार ही स्वीकार किये गये हैं। वे इस प्रकार हैं —

(i) ब्रह्म विवाह — जब ब्रह्मचर्य आश्रम पालन करते हुए वेदपारंगत सच्चरित्र, धार्मिक, पढ़े विद्वान वर से प्रसन्नतापूर्वक वधू का विवाह होता है तो उसे ब्रह्म विवाह कहा जाता है। इसके अनुसार माता-पिता अपनी कन्या के लिए अपनी खुशी से सुयोग्य एवं सुशील वर ढूढ़ते हैं। उसे अपने घर आमंत्रित कर कन्या को वर एवं आभूषण आदि से सुसज्जित कर उसे दान कर देते हैं।

(ii) दैव विवाह — इसके लिए कन्या के पिता एक यज्ञ की व्यवस्था करते हैं। जो पुरुष इस यज्ञ को उचित ढंग से पूरा करता है पिता अपनी कन्या को वस्त्र, आभूषण आदि देकर उसे दान कर देते हैं। प्राचीन काल में यज्ञों का महत्व होने के कारण इस विवाह का अधिक प्रचलन था।

(iii) आर्ष विवाह — प्राचीनकाल में किसी ऋषि से कन्या के विवाह को आर्ष विवाह कहा जाता था। परन्तु इसके साथ इस तरह

रहती थी कि अतिथि को अपने भावी वधू को एक गाय, अथवा एक बैल अथवा उनके जोड़े देने पड़ते थे। अतिथि को यह इसलिए देना पड़ता था कि यह प्रमाणित हो जाए कि वे विवाह-बन्धन स्वीकार करने को लिए तैयार हैं। यह कन्या-मूल्य नहीं होता था।

(iv) प्रजापत्य विवाह – ऐसे विवाह में वैवाहिक जीवन के बारे में उपदेश देकर वर की विधिवत पूजा करने के उपरान्त कन्या दान कर दी जाती थी। उपदेश के रूप में कहा जाता, "तुम दोनों मिलकर गृहस्थ धर्म का पालन करना तथा तुम दोनों का जीवन सुखी एवं समृद्धिशाली हो।"

(v) असुर विवाह – इस विवाह के अन्तर्गत विवाह के इच्छुक वर द्वारा कन्या के पिता व अभिभावक को कन्या के गुण और कुल के आधार पर जो मूल्य निर्धारित होते, उसे चुकाना पड़ता था। छोटी जातियों में इसका प्रचलन है।

(vi) गान्धर्व विवाह – जब वर और कन्या परस्पर प्रेम के फलस्वरूप अपने माता-पिता की अनुमति के बिना एक-दूसरे को पति-पत्नी स्वीकार कर लेते हैं तो उसे गान्धर्व विवाह कहा जाता है।

(vii) राक्षस विवाह – लड़ाई-झगड़ा, अपहरण अथवा कपट द्वारा किसी की कन्या के साथ विवाह करना राक्षस विवाह है। ऐसा प्राचीनकाल में युद्ध में विजय प्राप्त कर स्त्रियों से विवाह करने का प्रचलन था। युद्ध क्षत्रियों का धर्म था। अतः इस प्रकार का विवाह वे ही करते थे।

(viii) पैशाच विवाह – नशे में उन्मत्त अथवा सोयी हुई स्त्री के साथ जबर्दस्ती अथवा धोखा देकर यौन संबंध स्थापित करने को पैशाच विवाह कहा जाता है। विवाह संस्कार पूरा करने पर समाज उसे स्वीकार कर लेता है।

इन आठ प्रकार के विवाहों में ब्रह्म विवाह को सर्वश्रेष्ठ, दैव और प्रजापत्य विवाह को मध्यम श्रेणी का, आर्ष, असुर और गान्धर्व को निकृष्ट, राक्षस को अधम तथा पैशाच को महाभ्रष्ट माना जाता है। सामान्यतः उच्च जातियों में ब्रह्म विवाह तथा निम्न जातियों में असुर विवाह का प्रचलन है।

कुछ समाजशास्त्रियों ने संख्या के आधार पर निम्न प्रकार के विवाह को माना है –

(i) एकल (Monogamy) विवाह – इसमें एक पुरुष एक स्त्री से विवाह करता है। यह विवाह प्रायः सभी सभ्य समाजों में पाया जाता है।

(ii) बहुविवाह (Polygamy) – इस विवाह में एक पुरुष अनेक स्त्रियों से या एक स्त्री अनेक पुरुषों से विवाह करती है। जब एक स्त्री अनेक पुरुषों से विवाह करती है तो उसे बहुपति विवाह कहते हैं। इसका एकमात्र उदाहरण महाभारत काल में द्रौपदी का विवाह है।

(iii) गिरोह विवाह (Group marriage) – इस विवाह में एक गिरोह के पुरुष दूसरे गिरोह के सभी स्त्रियों से विवाह करते हैं। इस प्रकार के विवाह में व्यक्ति की प्रधानता न होकर गिरोह की प्रधानता होती है।

Scanned with CamScanner

पुराने जमाने में जब सभ्यता का विकास नहीं हुआ था, उस समय इस प्रकार का विवाह प्रचलित था।

(iv) परीक्षा विवाह (Marriage by Probation) — यह आदिम समाजों में प्रचलित रहा है। इसमें वर-वधू दोनों पक्षों की सन्तानोत्पत्ति तत्व आदि की परीक्षा ली जाती है। यह विवाह पूर्व यौन-संबंध तथा एक साथ रहने की परीक्षाजन्य प्रक्रिया है। इसके विवाह में परिणत न होने की स्थिति में वर, वधू के देहादि शोषण हेतु चन चुकाना है।

(v) सेवा विवाह (Marriage by service) - ऐसे विवाह में पुरुष, कन्या के माता-पिता की सेवा कर उसके बदले में उनके बेटी को पत्नी के रूप में प्राप्त करता है।

विश्व की अनेक संस्कृतियों व धर्मों में विवाह के भी स्वरूप भिन्न-भिन्न तथा अनेक हैं। उपरोक्त विवाहों के अतिरिक्त कुछ आधुनिक तरीके, विवाह के संबंध में प्रचलित हो रहे हैं जो इस प्रकार हैं-

(i) प्रेम विवाह (Love marriage) - इस प्रकार के विवाह में पुरुष-स्त्री दोनों आपस में प्रेम करते हैं। फिर बाद में मंदिर, मस्जिद में जाकर विवाह कर लेते हैं। बहुत से विचारकों ने प्रेम विवाह को आदर्श विवाह कहा है। विवाह का उद्देश्य भी प्रेम ही है। जीवन-साथी के चुनाव में पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए। यदि एक दूसरे की अभिरुचियों, आदतों आदि को जान जायें तो विवाह की सफलता की संभावना बढ़ जायेगी। प्रेम का विकास दाम्पत्य प्रीति में और उससे आत्मत्याग तथा अन्य उत्कृष्ट भावनाओं में जाग्रत होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो प्रेम विवाह में टूट होने की भी संभावना बनी रहती है। अतः पति-पत्नी के बीच आदर्शात्मक संबंध बनाये रखना नितान्त आवश्यक है।

(ii) कचहरी विवाह (Court marriage) — जब बालिग लड़का (आयु कम से कम 21 वर्ष) तथा बालिग लड़की (आयु कम से कम 18 वर्ष) प्रेम सूत्र में बँधकर ये कोर्ट में जज के समक्ष शपथ-पूर्वक विवाह करते हैं तो ऐसे विवाह को कचहरी विवाह कहा जाता है। ऐसा करने पर इन दोनों को प्रशासन या पुलिस का भय नहीं रहता। इस विवाह को सरकार संरक्षण देती है।

उपरोक्त विभिन्न प्रकार के विवाहों में सिर्फ एकल विवाह (Monogamy) को ही आदर्श विवाह माना जा सकता है। इसे ही समाज स्वीकार करता है और अधिकांश स्त्रियाँ भी यही चाहती हैं। इसमें एक पुरुष को एक पत्नी और एक पत्नी को एक पुरुष रखने का प्रावधान है।

हिन्दू मैरिज एक्ट के अनुसार किसी हिन्दू तथा जो हिन्दू नहीं है उनमें विवाह नहीं हो सकता वे 'सिविल मैरेज' कर सकते हैं। यह विवाह

Scanned with CamScanner

उस मैरिज एक्ट के तहत रजिस्ट्रार द्वारा सम्पन्न कराया जाता है, जिसे राज्य सरकार ने स्पेशल मैरिज एक्ट 1954 के अन्तर्गत मैरिज रजिस्ट्रार नियुक्त किया है। इसी प्रकार ईसाई और जो ईसाई नहीं है उनको इंडियन क्रिश्चियन मैरिज एक्ट 1872 के अन्तर्गत विवाह की अनुमति है।

डॉ० राम नारायण शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
दर्शनशास्त्र
आर० एस० एस० कॉलेज, मुंगेर

Scanned with CamScanner